****

दूसरा अध्याय : हिंदी के मनोवैज्ञानिक नाटक के विकास की रुपरेखा

मनोविज्ञान शब्द की व्युत्पत्ति, अध्यात्मशास्त्र और मनोविज्ञान, साहित्य में मनोविज्ञान, मनोवैज्ञानिक नाटकों का विकास, संस्कृत के मनोवैज्ञानिक नाटकों का हिंदी नाटकों पर प्रभाव, पाश्चात्य नाटकों में मनोवैज्ञानिक परम्परा, शेक्सपीयर के नाटकों में मनोविज्ञान, इब्सन के यथार्थवादी नाटकों में मनोविज्ञान, टाल्सटाय के नाटकों में मनोविज्ञान, पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक नाटकों का हिंदी नाटकोंपर प्रभाव, निष्कर्ष ।

****

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

मनोविज्ञान शब्द की व्युत्पत्ति :-

मनोविज्ञान यह शब्द अँग्रेजी के ' साईकोलाजी ' (Psychology) शब्द का अनुवाद है । इस शब्द की व्युत्पत्ति ग्रीक भाषा के ' साइके ' (Psyche) आत्मा तथा ' लोगस ' (Logos) प्रवचन से हूई है । इस प्रकार मनोविज्ञान का अर्थ आत्मा का अध्ययन माना जाता है । ग्रीक दर्शनिकों ने ' साइके ' का अनुवाद ' मन ' कर दिया और तब से मनोविज्ञान की परिभाषा मन के अध्ययन के रुप में दी जाने लगी और अन्त में उसका स्थान इस परिभाषा ने ले लिया कि ' वह व्यवहार का विज्ञान है । '

अध्यात्मशास्त्र और मनोविज्ञान :-

मानव की दो प्रधान मूल प्रेरणायें है, आत्मरक्षा और आत्मविस्तार । " मानव भौतिक शरीर में स्थित आध्यात्मिक आत्मा से युक्त आध्यात्मप्रधान और प्राणिजगत में सर्वोत्कृष्ट सर्जन है जिसने अपना मानसिक विकास मन की उच्चतम भूमिका पर किया है । " [1] प्रखर बुध्दि और तर्कशास्त्र, विज्ञान को जन्म देती है जब की दैवी शक्ति की सत्ता से युक्त साहित्य और कला प्रधान रुप से मनुष्य के पार्थिव रुप के लिए नहीं तो उसकी आध्यात्मिक प्रगति के लिए सहायक है । " व्यावहारिक बुध्दिनैपुण्य से मनुष्य कल-बल और कौशल्य से विश्व को अपने हाथ में कर लेता है, अपने कला नैपुण्य और कल्पना शक्ति से विश्व को वह अपने पास पा लेता है । इसका मूल्य प्रयोजन सिध्दी में नहीं है, इसका मूल्य है आत्मीयता-साधन में, साहित्य-साधन में । अध्यात्मवाद का विषय अध्यात्मशास्त्र है ।" [2]

अध्यात्मशास्त्र का क्षेत्र मनोविज्ञान के क्षेत्र से अधिक व्यापक और

---

1) डा. उर्वशी सूरती — आधुनिक हिंदी कविता में मनोविज्ञान — पृ.स. 36

2) वही — वही — पृ.सं. 36

विस्तृत है । अध्यात्मशास्त्र सत्य के वास्तविक स्वरुप को पहचानने की चेष्टा में मनुष्य, प्रकृति और ब्रह्म की चर्चा नहीं करता, केवल मनुष्य की चर्चा करता है, जिससेदोनों में घनिष्ट संबंध है । इसलिए हम कह सकते हैं कि मनोविज्ञान अध्यात्मशास्त्र का एक ऐसा अंग है, जिसके सहारे हम आत्मज्ञान पाते है । मनोविज्ञान के अभाव में अध्यात्मशास्त्र अधूरा है । अध्यात्मशास्त्र और मनोविज्ञान यह एक दूसरे की जान हैं जिसके कारण वे दोनों एक-दूसरे का आधार लेकर चलते है ।

साहित्य में मनोविज्ञान :-

मानव अपने आविर्भाव के साथ-साथ एक अनन्त जिज्ञासा वृत्ति लेकर जन्मता है । उसकी आन्तरिक जिज्ञासा की सम्यक पूर्ति उनके आत्मचक्षु करते है । मनुष्य अपने अस्तित्व का रहस्य खोजने की चेष्टा से आत्मा की खोज करता है । मानव जीवन का उद्देश्य आत्मज्ञान प्राप्त करना है । मनोविज्ञान हमें मानसिक प्रक्रियाओं, चरित्र, आचरण आदि समझने का ज्ञान देता है, जिससे हम समस्याओं का समाधान पा सकते है और संसार की वास्तविकता और यर्थाथता को हम समझौते के साथ स्वीकार करजीवन को जीने के योग्य बनाते हैं । कला यथार्थ का निर्माण भी करती है और उसका उद्घाटन भी । चाहे वह यथार्थ भीतरी हो अथवा बाहरी, आत्मगत हो या वस्तुगत । जीवनगत सत्यों का आत्मसाक्षात्कार करने की अद्भुत शक्ति पाकर व्यक्ति अपने मानसिक विकास के साथ मानसिक शांति और आत्मिक सुख पाता है । साहित्य और कला का भी काम है, प्रकाश करना, इसलिए हमारे मन को सत्य का स्वाद देना ही साहित्य का मुख्य काम है ।

भावों और मनोवेगों का अध्ययन मनोविज्ञान का केंद्र बिंदु है । साहित्य के भिन्न-भिन्न विषयों में मनोविज्ञान का प्रयोग हुआ है । साहित्य मनोभावों की उपज है । मानवी स्वभाव के पूरी जानकारी साहित्यिकों के लिए होती ही है । किसी भी साहित्य रचना

12053
A

में देश-काल की परिस्थिति, सभ्यता, आचार-विचार तथा साहित्य की अभिरुची दृग्गोचर होती है ।

साहित्य में अगर मनोविज्ञान का संबंध नहीं है तो वह कृती निष्प्रभ, निस्तेज और प्रभावहीन बन जायेगी । मनोविज्ञान के बिना वह साहित्य, साहित्य नहीं रहेगा । साहित्य में मानव के मनोविकार और भावों को प्रथम स्थान देना पडता है । इस तरह दोनों का संबंध जीवन से है । दोनों का मानव के मनोविकारों के साथ घनिष्ठ संबंध है । अन्तः हमें ऐसा कहना पडता है कि साहित्य और मनोविज्ञान का संबंध अटूट है ।

मनोवैज्ञानिक नाटकोंका विकास :-

नाटकों में मनोविज्ञान की परम्परा पुराण काल से चली आ रही है । आधुनिक नाटकों में ही मनोविज्ञान है यह मानना सरासर गलत है । भरत मुनि के मतानुसार नाट्यवेद का निर्माण ऋग्वेद के संवाद, यजुर्वेद के अभिनय, सामवेद से संगीत और अर्थवेद के रस तत्वों से है । वैदिक साहित्य के नाटक में ये कथोपकथन यम, यमी, पुरुरवा, उर्वशी, नेम-भार्गव व इन्द्र, लोपामुद्रा, अगस्त, विश्वमित्र व नदियों में पाये जाते हैं । इन सभी संवादों में अभुक्त काम की प्रेरणा और जीवनेच्छा के प्रबल मनोविग स्वभाव से मिलते है ।

इससे स्पष्ट होता है कि नाटकों के तत्वों की आधार शिला पूर्ण मनोवैज्ञानिक है । उसमें आये हुए संवाद, अभिनयात्मक बाहृय चेष्टाएँ, मनोविज्ञान की सारभूत सामग्री प्रस्तुत करती है । वैसे जीवन एक नाटक है, जिसका अभिनय अर्न्तबहि दोनों रुपों में मानव करता रहा है, कर रहा है और आगे भी करता रहेगा । अतः नाटक और मनोविज्ञान का उद्‌गम एक ही है ।

संस्कृत नाटकों में मनोविज्ञान :-

जीवन के हर क्षेत्र, व्यापार, परिस्थिति में नाटक के तत्व है । सुख, दुःख, क्रोध,

हर्ष, विनोद, भय आदि की स्थिति में जो दशा होती है, उसके स्वभाव का जो अंश प्रकट होता है, नाटक में वही अभिनय का आधार है । इन्हीं सिध्दान्तों के आधारभूत संस्कृत नाटकों में मनुष्य के यथार्थ का यथार्थ चित्रण पाया जाता है । संस्कृत नाटकों में इस यथार्थवाद की महत्ता को समस्या नाटककार लक्ष्मीनारायण मिश्र जी भी स्वीकारते है । उन्होंने कहा है कि आधुनिक मनोवैज्ञानिक नाटकों के बारे में जो कुछ जाना और समझा जा रहा है वह सब भरत के नाट्य-शास्त्र में बीज रुप में ही मिलता है ।

संस्कृत साहित्य में नाटक नामक रुपकों में सामाजिक दशा, युग-प्रवृत्ति, स्वप्न शैली और काम-प्रवृत्ति का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप में चित्रण किया है । कुछ प्रमुख नाटकों का यहाँ हम थोडे में परिचय देखेंगे ।

' मृच्छकटिक ' में युग-प्रवृत्तिगत मनोवैज्ञानिक परम्परा मिलती है । शूद्रक के समय निरंकुश शासन था । स्वेच्छाचारिता, राज्यकर्मचारियों का दमन-चक्र, सौंदर्यवती वेश्याओं का सत्कार, बहु विवाह प्रथा और सामन्तवाद के सब दोष शूद्रक के युग में दिखाई देते है । " इस नाटक का चारुदत्त काम प्रवृत्ति से आक्रांत है । वेश्या वसन्तसेना से आसक्ति उसकी यौन विच्युति का कारण मात्र है । "[3] इस नाटक से प्रतीत होता है कि तत्कालीन प्रवृत्तियाँ मानसिक कुण्ठाओं की जन्मदात्री थी । लोक में बढती हुई अनाचारता, दमन, मनोविकारग्रस्त असाधारणता, दमनोत्पन्न अनेक विवशता व्यक्तियों में बढ गयी थी ।

'स्वप्नवासवदत्तम् ' में भास ने स्वप्न शैली का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है । जिस मनोवैज्ञानिक स्वप्न शैली के नाटकों को भास ने इतने वर्ष पूर्व लिखा उसे पाश्चात्य नाटककार स्टिण्डवर्ग ओर मेतरलिंक की शैली माना जाता है । नाटक के नाम से प्रकट होता है कि वासवदत्ता के प्रति उदयन की आसक्ति दमित रुप में स्वप्न के द्वारा अभिव्यक्त होती है । वासवदत्ता को मंत्री यौगन्धरायण की दूरदर्शिता के कारण जलकर भस्म होने का बहाना करके उदयन की दृष्टि से ओझल कर दी जाती है । उदयन को आभूषण देखकर वासवदत्ता

---

3) डा. गणेश दत्त गौड – आधुनिक हिंदी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन पृ.सं. 128

मर गयी है इसका निश्चय होता है । लेकिन वासवदत्ता के प्रति उदयन की अतृप्तेच्छा उसके स्वप्न में झाँकती है । स्वप्न में वह अपनी पूर्व प्रेमिका का संकेत भी वासवदत्ता से करता है । जिस समय वह स्वप्न में बडबडा रहा था, परिस्थिति-वश वासवदत्ता वहाँ उपस्थित थी जो उसके स्वप्न में चलते हुए कथोपकथन को स्वंय पूरा करती जा रही थी । स्वप्न की यह फ्राइडियन पध्दति का प्रकारान्तर है । स्वप्न भंग के उपरान्त वासवदत्ता प्रत्यक्ष भागती हुई उदयन को नजर आती है । तब से उदयन वासवदत्ता को बार-बार मिलने के लिए उतावला हो उठता है । अपनी दूसरी पत्नी पद्मावती के सामने वासवदत्ता की उपस्थिति से भास ने उदयन की दमित - कुण्ठा को बडी मनोवैज्ञानिक पध्दति से उपचार करके उन्मूलित कर डाला है । जिस मनोग्रन्थि से ग्रसित व्यक्ति का मानसिक उपचार आज कोई भी पाश्चात्य नाटककार नहीं कर पा रहा वह महान नाटककार भास ने अपने स्वप्नवासवदत्त में किया है ।

कालिदास के ' अभिज्ञान शाकुन्तलम् ' में काम-प्रवृत्ति दिखाई देती है । शकुन्तला और दुष्यन्त में यह प्रवृत्ति बलवती होती है । शकुन्तला की अंगूठी जल में गिरना, प्रेम में बाधा होने का मनोवैज्ञानिक तथ्य है, ' ' जिसकी पुष्टि डा. होमरलेज की उस मनोविकृति वाली लेडी से होती है, जो अपनी अंगूठी की सांकेतिक-चेष्टा से जिसे वह होमरलेन के सामने बार-बार उतारती और चढाती थी तथा बाहृय रुप में पति से अपार प्यार करती हुई पति को तलाक दे बैठी है । " [4] शकुन्तला का अज्ञात-मन, दुष्यन्त द्वारा अवहेलना के प्रतिशोध में वह अंगूठी पानी में निकलवा बैठा है । इसका कारण यही है कि वह प्रत्यक्ष में दुष्यन्त को चाहती थी ।

भवभूति के ' उत्तररामचरित ' नाटक में समाजगत विशेषताओं के साथ-साथ नियतिवाद का मनोवैज्ञानिक चित्रण मिलता है । भवभूति के राम अपनी सीता का परित्याग फ्राइडियन नियतिवाद से परिपूरित है । जब से सीता रावण के यहाँ रही थी तभी से मनोग्रस्तता

---

4) डा. गणेश दत्त गौड आधुनिक हिंदी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन पृ.सं. 129

वश राम के अव्यक्त मन में सीता के प्रति घृणा के भाव अन्तर्निहित थे । वह नियतिवाद की मनोग्रन्थि समाजगत-हेतु अवधारणा करके हठात फूट निकली और गर्भिणी सीता को वनवास दे डालते है ।

संस्कृत नाटकों से कम-अधिक पैमाने पर मनोवैज्ञानिक नाटकों के उदाहरण मिलते है । हमे देखना यह था कि मनोवैज्ञानिक नाटकों की परम्परा पौरस्त्य नाटकों में अविच्छिन्न गति से धारावाहिक रुप में मिलती है, जिसका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव हिंदी नाटकों पर पडा है । आधुनिक हिंदी नाटककार चाहे पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक नाटकों की चकाचौंध में वास्तविकता को भले ही भूल गये हो किन्तु यह मनोवैज्ञानिक परम्परा संस्कृत नाटकों से अब तक हिंदी में अक्षुण्ण रुप से चली आ रही है ।

संस्कृत के मनोवैज्ञानिक नाटकों का हिंदी नाटकों पर प्रभाव :-

आधुनिक हिंदी नाटककारों ने अधिकांश में अपने आपको पाश्चात्य नाटककारों का ऋणी माना है, लेकिन लक्ष्मीनारायण मिश्र जी का मत उससे भिन्न है ।" मिश्र जी अपने नाटकों में भीतरी भाव लोक कालिदास और भास की परम्परा में मानते है और बाह्य प्रभाव पश्चिम का उन्होंने अपने नाटकों पर स्वीकार किया है । " [5] मिश्र जी के उपरी आकार-प्रकार , भाषा, संवाद और व्यंग्य पर इब्सन और उसके बाद के नाटककारों का प्रभाव उनके नाटकों पर पडा है । डा. महेंद्र के अनुसार मिश्र जी की सैक्स समस्या पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक अनुसन्धानों पर कुछ आलोचक मानते है किन्तु मिश्र जी फ्राईड की अपेक्षा इसका श्रेय वात्स्यायन को देते हैं । इन दोनों मतों से सुस्पष्ट है कि मिश्र जी पर भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों का प्रभाव है ।

भारतीय परम्परा में सर्वश्रेष्ठ नाटक ' वत्सराज ' है । वत्सराज की कथावस्तु संस्कृत के महान नाटककार भास के ' स्वप्नवासवदत्तम् ' के अनुरुप है । उसका मनोवैज्ञानिक

---

5) डा. गणेश दत्त गौड — आधुनिक हिन्दी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन पृ.सं. 131

विकास भास की स्वप्न शैली के अनुसार हुआ है । ल. मिश्र जी के वत्सराज, दशाश्वमेध, वेशाली में वसंत, गरुडध्वज, वितस्तता की लहरें और नारद की वीणा में तप और भोग की प्रधानता कालिदास और भास की तरह दिखाई देती है । इन नाटकों में उदयन, वासवदत्ता, वीरसेन, कौमुदी, वीरभद्र, रोहित, रम्भा, विक्रमादित्य, कालिदास, पुरु और रोहिणी में काम का उदात्त रुप भारतीय संस्कृति के अनुसार विकसित हुआ है । इसमें पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों की स्वप्न शैली की परछाई तक नहीं दीखती, केवल भास की स्वप्नगत शैली का इसमें मानवीय स्वभावगत परम्परा का अनुकरण मात्र है । दशाश्वमेध का वीरसेन तो काम के उदात्तीकरण का सच्चा प्रतीक है । इसका ऊपरी आकार आधुनिक है, पर भावलोक में भरत के सिध्दान्तों का अनुकरण हुआ है । अतः वीरसेन का कामात्मक उर्ध्वगमन भारतीय दर्शन के आत्मसंयम वाली परम्परा में आता है । इसमें फ्राइड की कामशोधन प्रवृत्ति भले आरोपण किया जाये, लेकिन उसका संबंध, बाह्य होगा आत्मगत नहीं ।

मिश्र जी के नाटकों में भारतीय संस्कृति जीवनदर्शन और भारतीय परम्परा के प्रति अनुराग दिखाई देता है । उनके ' वैशाली में वसन्त ' नाटक का रोहित भारतीय दर्शन का सच्चा प्रणेता है । उसके पिता सेनापति वीरभद्र में तप और भोग सामंजस्य से अम्ब्रपाली के प्रति काम का अभूतपूर्व परिशोध हुआ है ।' वितस्ता की लहरें ' का केकय नरेश पुरु भारतीय आत्मा लेकर उपस्थित हुआ है । पुरु का चरित्र संस्कृत नाटकों के चरित्रों से अनुप्रेरित है । गरुडध्वज के कालिदास और विक्रममित्र में भी इन्हीं चरित्रों से प्रेरणा मिली है ।" पाश्चात्य नाट्य शैली की दृष्टि से मिश्र जी स्वयं स्वीकार करते हैं कि उनके नाटकों की आत्मा भारतीय और वेशभूषा पाश्चात्य है । " [6] अतः उनके नाटकों पर जहाँ संस्कृत नाटकों का प्रभाव है वहाँ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप में पाश्चात्य नाटकों का भी प्रभाव दिखाई देता है ।

---

6) डा. गणेश दत्त गौड --आधुनिक हिंदी नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन पृ.सं. 132

पाश्चात्य नाटकों में मनोवैज्ञानिक परम्परा :

पाश्चात्य नाट्य साहित्य में सर्वप्रथम मनोवैज्ञानिक परम्परा का उद्‌गम ग्रीक दु:खांत नाटकों में दिखाई देता हैं । ग्रीक दु:खांत नाटककारों में विशेषता ' एवीलस ' सोफोक्लीज और युरोपिडीज का स्थान उल्लेखनीय है । किन्तु मनोवैज्ञानिक नाट्य-परम्परा का विकास सोफोक्लीज और युरोपिडीज की दु:खांत नाटकों में ही पाया जाता है । सोफोक्लीज के दु:खांत नाटक मनोविज्ञान की प्रथम कडी है, क्योंकि कुछ स्थानोंपर फ्राईड ने भी उनका अनुकरण किया है । सोफोक्लीज ने ओडिपस कहानी से ही दु:खान्त नाटक बनाये है जिसमें मनोविश्लेषण के तरीके भी दिखाई देते है ।

सोफोक्लीज के उपरान्त रोम के दु:खान्त नाटकों में ' सेनेका ' नामक नाटककार ने घात-प्रतिघात, रक्तपात और निराशा का चरित्र-चित्रण अपने नाटकों में किया है । शेक्सपीयर ने इन्हीं नाटकों में मनोविश्लेषण पध्दती के आधार पर ही प्रेतात्माओ और जादूगरनियों को पात्र बनाया है । शेक्सपियर के हैमलेट के पिता की आत्मा और बाकों एवं सीजर की प्रेतात्मा इसका प्रमाण है ।

शेक्सपीयर के नाटकों में मनोविज्ञान :-

शेक्सपीयर के दु:खान्त नाटकों में ऐतिहासिक पात्रों की जीवन गाथा को मनोवैज्ञानिक विशेष घटनायें ही नाटकीय रुप में दिखायी गयी है । हैमलेट का प्रतिशोध और आथेलो का प्रतिशोध दोनों ही एडलर की क्षतिपूर्ति की प्रतिक्रिया तथा प्रतिशोध ग्रन्थि से अनुप्राणित है । लियर का प्रमाद अन्तर्द्वन्द्व की चरण सीमा पर पहुँच चुका है ।

शेक्सपीयर के नाटकों में हैमलेट की ओफिलिया हैमलेट को हताश करती है । लेडी मैकबैथ, मैकबैथ को उत्तेजित करती है । आथेलो की डेसडेमोना अपनी दैवी सरलता तथा विश्वास से आथेलो को ईर्ष्यालु बनाती है । लियर की पुत्रियाँ लियर को पागल बना देती है ।

ये सब पात्र परस्पर मानसिक नियतिवाद से अनुप्रेरित होकर घात-प्रतिघात का आश्रय लेते हैं । तभी इन सब में मनोग्रस्तता आद्योपान्त सन्निहित रही है ।

मैकबैथ में लेडी मैकबैथ और स्वंय मैकबैथ में आन्तरिक द्वन्द्व और विभ्रम की पराकाष्ठा है । हैमलेट नाटक में हैमलेट की प्रतिशोध भावना प्रबल है । परन्तु यहाँ ग्रंथि मातृ-प्रणय ग्रन्थि स्पष्ट दिखाई देती है ।

इब्सन के यथार्थवादी नाटकों में मनोविज्ञान :-

इब्सन के ' घोस्ट्स ' नाटक में मनोवैज्ञानिक परम्परा का निखरा रुप मिलता है । विवाह प्रेम का प्रतिद्वन्दी है, क्योंकि वैवाहिक जीवन में प्रेम रुढिबध्द कर्तव्य को निभाने के कारण प्रेम नहीं रहता । नाटक में श्रीमती एलविंग के परिवार का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है, जिसमें कर्तव्य और नैतिक आदर्शो के अन्धानुकरण के कारण जीवन अभिशाप बन गया है । श्रीमती एलविंग के संवादों में अपने नैतिकार्ह और पति के प्रकृत काम तथा स्वपुत्र औसवल्ड में आनुवंशिक पूर्व प्रवृत्ति स्पष्टता से दिखाई देती है ।

इब्सन का ' ए डाल्स हाऊस ' नोरा के नारी मनोविज्ञान से परिपूरित है । नाटक की कथावस्तु सैक्स से संबंधित है नोरा का विवाह निर्धन हेल्मर से होता है । आर्थिक दशा और हीन-भाव के कारण हैल्मर रोगग्रस्त हो जाता है । अपने पति को बचाने के लिए नोरा क्रागस्टेड से रुपया लेना चाहती है । क्रागस्टेड रुपया इसलिए देते हैं कि उसके अनियंत्रित इंड को संतोष मिलता है । पत्नी के घृणित काम से हैल्मर के अहं को बडी ठेस पहुँचती है । क्रागस्टेड जिस बैंक में कर्मचारी का काम करता था वहाँ ही हैल्मर की नियुक्ति मैनेजर के रुप होती है । हैल्मर में प्रतिशोध-ग्रंथि जाग उठती है नोरा का अनुनय-विनय न मानकर वह क्रागस्टेड को पदच्युत कर देता है । नोरा अपना अपमान सहन नहीं कर पाती और अपने अह के कारण स्वतंत्र जीवन बिताने के लिए अग्रेसर होती है ।

इब्सन का तीसरा नाटक ' दी पिलर्स आफ सोसाइटी ' का कास्तर्न बर्निक भी अपने अव्यवस्थित इड़ का शिकार है । उसकी एक नहीं तीन प्रेमिका है । पहले उसकी कामुक प्रवृत्ति ' लोना ' को वश में करती है । संपत्ति के हेत्वारोपण से वह कुछ काल बाद ' लोना ' को छोडकर उसकी बहन ' बेली ' के साथ विवाह करता है । इसी बीच उसके जीवन में एक अभिनेत्री आ जाती है । अभिनेत्री के साथ वह मौके पर पकडा जाता है । लोना से त्यागकर बेली से विवाह का कारण बेली की वह संपत्ति बतलाता है । लेकिन है यह हेत्वारोपण, क्योंकि बेली से पहले भी वह विवाह कर सकता था । अभिनेत्री की ओर झुकाव भी प्रकृत काम को ही पुष्ट करता है ।

बर्नार्ड शॉ के यथार्थवादी नाटकों में मनोविज्ञान :-

शॉ के ' आर्म्स एण्ड द मैन ' नाटक का प्राणतत्व सैक्स है । नाटक का बाह्य कलेवर युध्द की भयंकरताओं से भरा हुआ है, लेकिन उसका पर्यवसान फ्राईड की काम प्रवृत्ति में है । राहिना और सरजियस दोनों में अगाध प्रेम है । उन दोनों का दृढ निश्चय है कि जीवन में उन्हें विवाह-सूत्र में बंधना है । पर यह निश्चय केवल इड़ की संतुष्टि मात्र हैं, क्योंकि सरजियस का सच्चा प्यार लूका नामक युवती से है और राहिना का आत्मसपर्ण स्विस आफीसर व्लंचली की ओर है । शॉ ने सरजियस और राहिना के मनोवैज्ञानिक चरित्र-चित्रण में फ्राईडियन आरोपण का हृदयस्पर्शी मनोविश्लेषण प्रस्तुत किया है । वैसे ये दोनों प्रेमी आपस में प्रेम ही चाहते थे, विवाह नहीं ।

शॉ के ' मैन अ‍ॅण्ड सुपरमैन ' में भी काम प्रवृत्ति ही है । इसमें प्रेम से भी विवाह की उपयोगिता नगण्य सिध्द् की है । नायिका ' एन ' के ' टेनर ' और ' आक्टेवियस ' दो प्रेमी है । ' एन ' उन दोनों से प्रेम करने के अतिरिक्त विवाह की बात तक सोचती नहीं । शॉ ने यहाँ प्रेम और विवाह की भिन्नता प्रकट करते हुए प्रकृत काम की उन्मुक्त उडान पर जोर दिया है ।

शॉ के ' सीजर एण्ड क्लियोपाट्रा ' की मनोवैज्ञानिकता इस बात से ही ज्ञात होती है कि फ्राईड ने स्वयं इसी नाटक से भूल के मनोवैज्ञानिक तथ्यों को ग्रहण किया है । नाटक के अंतिम दृश्य में सीजर जाते समय उसके मन में यह भावना घूम रही थी की वह और कुछ करना चाहता था जो इस समय भूल गया है । बाद में उसे याद आता है कि वह क्लियोपाट्रा से अलविदा करना चाहता था । सीजर की अन्त में हत्या हो जाती है । सीजर की इस भूल में अज्ञात मन के द्वंन्द्व का प्रकारान्तर है, जिसे शॉ ने बडे ही कौशल्य से अभिव्यक्त किया है ।

टाल्सटाय के नाटकों में मनोविज्ञान :-

टाल्सटाय के पात्रों में मैथुनिकशीलता, यौन विच्युति और स्वआक्रमण प्रेरणा वेग दिखाई देता है । उनके नाटक ' द लिविंग कार्प्स आर रिडेक्शन ' की कथावस्तु काम-प्रवृत्ति पर आधारित है । नाटक के नायक ' फीडिया ' पर मैथुनिक शीलता का प्रभाव है । उसकी पत्नी यौन परितृप्ती के लिए दुसरा प्रेमी ढुँढ लेती है । फीडिया का अहं ' लिसा ' के इस बर्ताव को सहन नहीं करता । वह मनोग्रस्त होकर बाह्य चेष्टा करने लगता है । इसका कुछ परिणाम नहीं होता । एक दिन वह नदी किनारे कोट उतारकर मर जाने का बहाना करता है । ' लिसा ' के इड को सतुष्टि मिलती है । फीडिया अपनी पत्नी और उसके प्रेमी को रंगे हाथ पकडता है । किन्तु फीडिया हीन भाव से पीडित हो जाता है । ' लिसा ' के स्वैरिणी मनोवृत्ति को वह बदल नहीं पाता और उसके प्रेमी से बदला नहीं ले पाता तब ' स्वपीडक परितोष ' से पीडित होकर आत्महत्या कर लेता है । मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह स्व-आक्रमण-प्रेरणा-वेग का मानसिक प्रक्रम है ।

मनोविश्लेषणवादी नाटककार युगेन ओनील के नाटकों में अतृप्त-काम एवं हीनत्व,

कुण्ठा का प्रभाव दिखाई देता है । यह एक अभिव्यंजनावादी शैली का उच्च नाटककार है । उनके प्रमुख नाटक ' बियांड द हौराइजन ' और ' द हेयरी ऐप ' है । यह नाटक अभुक्त काम प्रेरणा, यौन-विच्युति के दुष्परिणाम, कुण्ठा, स्वआक्रमण- प्रेरणावेग मनोवृत्ति से परिपूर्ण है । ' द हेयरी ऐप ' नाटक में व्यक्ति प्रकृति क सामने अपना मानसिक संतुलन खोता हुआ दृष्टिगोचर होता है ।

जर्मनी के स्वाभाविकवादी नाटककार सण्डरमैन के नाटकों में निषिध्द प्रेम का बाहुल्य अधिक है । ' द वेल आफ कण्टेण्ट ' में एक हैडमास्टर के निषिध्द प्रेम की इच्छा का मनोवैज्ञानिक चित्रण नाटक में मिलता है । उनका दूसरा नाटक ' द बैटिल आफ बटर फलाइज ' में एक विधवा के प्रेम का आन्तरिक द्वन्द्व का चित्रण है । इस वर्ग में आनेवाले जर्मन के नाटककार हाप्टस्मैन भी है ।

स्टिण्ड वर्ग के नाटकों पर फ्राईडियन-स्वप्न-शैली और काम प्रवृत्ति का प्रभाव दिखाई देता है । स्टिण्ड वर्ग विवाह में विश्वास नहीं करते । वे कहते है कि स्त्री-पुरुष के रात-दिन अधिकार और कर्तव्य के द्वन्द्व जीवन को जीवन नहीं छोडते । अतः विवाह न करना कहीं अच्छा है, क्योंकि स्त्री पुरुष वैवाहिक जीवन में कैंची की दो धारों के समान है जो कभी अलग नहीं हो सकते और सदैव ही दो विरोधी तत्वों से टकराकर बीच में पडने वाले को काटने के लिए तैयार होते है । फ्राईडियन स्वप्न शैली में उनका प्रमुख नाटक ' दी अण्डर स्टार्म ' है । वैवाहिक जीवन की असफलता के बारें में - ' दी डान्स आफ डैथ ' , ' क्रेडिटर्स ', ' दी लिंक ' आदि प्रमुख नाटक आते है ।

आस्कर वाइल्ड का ' द डचेस आफ पाटुआ ' नाटक में यौन-विकृति परिपूर्ण दिखाई देती है । यह नाटक यौन विकृति का नग्न चित्र उपस्थित कर देता है । राजा के राज्य में रहने वाला राजदूत ' गाइडो ' रानी को अपने प्रेम में फंसा लेता है । रानी

की यौन -बुभुक्षा इड़ के प्राबल्य से राजा की हत्या करवा डालती है । जब गाइडो को जेल में बंद किया जाता है तो रानी स्वंय आत्महत्या करती है । समस्त नाटक यौन विकृति के चुंबन, आलिंगन, प्रेम से भरपूर है ।

संक्षिप्त रुप में पाश्चात्य नाटकों की इस मनोवैज्ञानिक परम्परा के अनुशीलन के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि यह धारा सोफोक्लीज की फ्राइडियन इडिपस ग्रंथि से निःसृत होकर तदनंतर यूरोपिडीज के यथार्थवादी नाटकों में इसका पूर्णतया निर्वाह हुआ है । ग्रीक नाटककारों के उपरान्त रोम के नाटककार ' सेनेका ' ने अपने नाटकों में अविरल गति से उसको प्रवाहित किया है । शेक्सपियर के नाटकों में सेनेका का अविकल रुप इस परम्परा को सुविकसित करता हुआ पाया जाता है । तत्पश्चात् फ्रांस के मोलियर ने अपने नाटको में इस धारा का निर्वाह सैक्स एवं इड़ की अनियंत्रिता के रुप में किया ह । यथार्थवादी नाटककार इब्सन और जार्ज शॉ के नाटकों में आनुवंशिक पूर्व प्रवृत्तिगत मैथुनिक मानसिक ग्रस्तता, अतृप्त काम, हैत्वारोपण, आरोपण, भूलों का मनोविज्ञान आदि का निखरा रुप है । रुसी नाटककार टाल्सटाय के पात्रों में जो मैथुनिक शीतलता, यौन विच्युति और स्व-आक्रमण प्रेरणावेग पाया जाता हैं वह इसी धारा के प्रतिरुप है ।

यूरोपिय नाटकों में आधुनिकतावादों में मनोवैज्ञानिक परम्परा का पुर्ण स्वस्थ रुप सामने आता है । इसका प्रधान कारण नवीन मनोविज्ञान का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव है । चेखव के नाटकों में अनियंत्रित इड़ पिरैंडेलो के पात्रों में बहुव्यक्तित्व ओनील में हीन भाव तथा अतृप्त काम और सैडंरमैन के नाटकों में निषिध्द-प्रेम की इच्छा, स्टिन्डवर्ग और मैतरलिक की स्वप्नशैली इसी प्रभाव से अनुप्रेरित है । इन वादों के अधिकांश नाटककार फ्राईड के मनोविश्लेषणवाद के ऋणी है । आधुनिक यूरोपिय नाटककार जिसप्रकार फ्राईड के ऋणी है, उसीप्रकार फ्राईड भी अपनी स्थापनाओं की पुष्टि में सोफोक्लीज , यूरोपिडीज, शेक्सपीयर, इब्सन और बर्नार्ड शॉ का ऋणी है, क्योंकि अपनी परिपक्वता के लिए फ्राईड ने इन्हीं नाटककारों के कथोपकथन का आधार लिया है ।

पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक नाटकों का हिंदी नाटकों पर प्रभाव :-

पाश्चात्य नाट्य साहित्य के आदान-प्रदान से इस मनोवैज्ञानिक परम्परा का हिंदी नाटकों पर प्रभाव हमे शेक्सपीयर के नाटकों द्वारा सर्व-प्रथम दृष्टिगोचर होता है । शेक्सपीयर के नाटकों का हिंदी अनुवाद इस पध्दति का सर्वोत्कृष्ठ माध्यम है । मोलियर, इब्सन, बर्नाड शॉ और चेखव आदि द्वारा लिखित नाटकों के भी हिंदी में अनुवाद इस मार्गप्रदर्शन के प्रतिपादक है । अनुवादों के अतिरिक्त इन नाटकों का पठन-पाठन भी इस परम्परा को आगे बढानें में सहायक सिध्द हुआ है ।

हिंदी नाटकों में भी ऐसी रचनायें स्वभावतः पायी जाती है । उदयशंकर भट्ट का ' प्रथम विवाह ' एकांकी सोफोक्लीज में प्रयुक्त इडिपस ग्रन्थि का ही सुविकसित रुप है । ' प्रथम विवाह ' की नायिका ' काद्रबेयी ' सोफोक्लीज की नायिका ' जोकास्टा ' से निषिध्द संभोग में दो कदम आगे है । वह अपने मध्यम पुत्र काद्रवेय के साथ किये गये संभोग को छिपाती नहीं वरन् साफ-साफ कह डालती है । किंतु जोकास्टा माता-पत्नी का निषिध्द संभोग उसके अज्ञात मन द्वारा छिपाया जाता है ।

शेक्सपीयर के नाटकों का प्रभाव भारतेन्दु युग के नाटककारों पर कही-कहीं पडना प्रारंभ हुआ था । शेक्सपीयर की मनोवैज्ञानिक शैली एवं चरित्र वैचित्र्य की प्रेरणा हिंदी नाटककारों ने बंगला नाटककार द्विजेंद्रलाल राय के माध्यम द्वारा प्राप्त की है । द्विजेंद्रलाल राय पर शेक्सपीयर का गहरा प्रभाव पडा है । उसी का प्रभाव यहाँ जयशंकर प्रसाद पर भी दिखाई देता है । हिंदी में परिलक्षित इस माध्यम की मनोवैज्ञानिक शैली का परिचय हम यहाँ लेंगे । यहाँ पर शेक्सपीयर का द्विजेंद्रलाल राय पर प्रभाव और द्विजेंद्रलाल का जयशंकर प्रसाद पर पडा प्रभाव प्रस्तुत करेंगे ।

द्विजेंद्रलाल राय के ' उस पार ' , ' शाहजहाँ ' और ' नूरजहाँ ' नाटक

शेक्सपीयर के मनोवैज्ञानिक वर्ग में आते है । ' उस पार ' के भोलानाथ और भगवानदास पात्रों में घात-प्रतिघात और मानसिक कुण्ठाओं का विलक्षण प्रसार है । भोलानाथ में अपनी पोती सरस्वती की हत्या सुनकर शैक्सपीयर के हैमलेट का सा विभ्रम हो जाता है । उसे ऐसा आभास होता है जैसे हैमलेट के पिता की तरह सरस्वती की आत्मा भी ' उस पार ' बुला रही है ।

शेक्सपीयर के किंगलियर की तरह शाहजहाँ में मानसिक द्वन्द्ववश्यता और परस्पर विरोधी भावों के घात-प्रतिघात मिलते है । डंकन की हत्या के बाद बूटस के मन में जो विभ्रम की लहर उठी है वह औरंगजेब में दारा की हत्या के पश्चात् भयंकर तूफान सी दिखाई दे रही है । औरंगजेब की इस हत्या का विभ्रम आंतरिक द्वन्द्व की महानता प्रकट करता है, वह कहता है " कौन जिम्मेदार है । मैं ? यह फैसला है । कैसी आवाज ? नहीं हवाई आहट है । रात को नींद नहीं आती । वह क्या - फिर वही दारा का कटा हुआ सिर । शुजा की खुन तर लाश । मुराद का धड । " यही विभ्रम औरंगजेब के साथ ही दारा की मृत्यु के बाद पिता शाहजहाँ में है । शाहजहाँ भी पागलों की तरह बकते है - ' खून ? खून ? वह खून निकल रहा है । तमाम फर्श भीग गया देखूँ (दौडकर दारा के कल्पित रुधिर को अपने दोनों हाथों में मल कर) अभी तक गर्म है, धुआँ उठ रहा है । " शाहजहाँ और औरंगजेब में मानसिक कुण्ठायें भरी हूई है ।

द्विजेंद्रलाल राय की नाट्य कृतियों में मनोविज्ञान की अप्रत्यक्ष रुप से झलक हम नूरजहाँ में पाते है । नाटककार ने इस नाटक में मानव के अन्तर्मन में स्थित मूलगत प्रवृत्तियों को ही चुन -चुन कर भरने का प्रयास किया है । ऐतिहासिक तथ्यों से परिपूर्ण घटना में मानव की मूलगत प्रवृत्तियों को भर दिया है । नूरजहाँ में दलित ग्रंथी

की ही प्रमुखता है । उसमें एक ओर काम का अबाध प्रवाह दमित कर अनैच्छिक दिशा की ओर मोड दिया जाता है । जहाँगीर के साथ संभोग की अतृप्तेच्छा स्वंय को और शे. अफगान को दोनों को छलती हुई दिखाई देती है । नूरजहाँ की एकान्त में प्रस्फुरित विचार शृंखला अति मनोवैज्ञानिक है, जैसे बुझती हुई चिनगारी को नया ईंधन मिलनेपर वह जिसप्रकार धुआँ निकालती हैं उसी तरह ही नूरजहाँ की स्थिती हो गयी है । वह आन्तरिक द्वन्द्व से भर गयी है । अन्तर्द्वन्द्व में बहुव्यक्तित्व, विभ्रम और भयंकर विरोधाभास का प्रतिफल बुरा ही मिलता है । तीव्र लालसा का अवरोध अन्त यही परिणाम दिखाता है । पागल पन के बारें में फ्राइड ने एक क्रमबध्द कहानी कही है उसका ज्यों का त्यों विवरण नूरजहाँ नाटक में मिलता है । नूरजहाँ की चेष्टायें, विक्षिप्तता की दशा में मुट्ठी बाँधकर बिजली की ओर तानना आदि प्रतिहिंसा तथा प्रतिशोध मनोग्रथि को अतृप्ति के ही प्रतिरुप है ।

प्रसाद जी के स्कन्दगुप्त, अजातशत्रु, चाणक्य और भट्टार्क के व्यक्तित्व में द्विजेंद्रलाल राय के औरंगजेब और नूरजहाँ की ही दोहरे है । शेक्सपीयर के हैमलेट की सी मानसिक द्वन्द्ववश्यता स्कंदगुप्त में मिलती है । अजातशत्रु और मैकबैथ में महत्वकांक्षा समान है । प्रसाद जी का भट्टार्क ओथेलो के इयागो से प्रेरित है । चाणक्य का मनोविश्लेषण नूरजहाँ का मनोविश्लेषण नूरजहाँ नाटक के मनस्तत्व की प्रतिछाया है । इस तरह जयशंकर प्रसाद जी ने शेक्सपीयर के अन्तः प्रवृत्ति वाले पात्रों की अवतारणा की है । उनके 'प्रयश्चित' में अन्तः प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं । 'जयचन्द्र' का आन्तरिक द्वन्द्व , संयोगिता का प्रेत - छाया दीखने वाला विभ्रम, मैकबैथ के अनुरुप है । प्रसाद के अजातशत्रु के स्वगत भाषण मैकबैथ की भाँति मनस्तत्व से प्रेरित है । चंद्रगुप्त , हैमलेट , मैकबैथ की तरह स्नायु व्यतिक्रमी ज्ञात होता है । क्योंकि वह मानवीय मनोविज्ञान के विशेषज्ञ चाणक्य से पग-पग पर संमोहित होता है । शेक्सपीयर द्वारा प्रचलित यह धारा अविरल गति से आगे भी प्रवाहित होती रही है ।

प्रतापनारायण मिश्र के 'कलिकौतुक' रुपक और मोलियर के, लि मैरेज फोर्स' और जार्ज डेनडीन 'आरद बैफुल्ड हसबैंड,' की काम प्रवृत्ति में समानता पायी जाती है । 'कलिकौतुक'

की श्यामा का स्वच्छन्द इड़ अपने सामाजिक अहं और आधिपत्य जमाकर 'रसिक बिहारी ' के साथ इसी प्रकार संगम करके तृप्ति में संलग्न है जैसे मोलियर के उक्त दोनों नाटकों की नायिकाएँ अपने अनियंत्रित इड़ की तृप्ति के लिए पर पुरुष के साथ संगम में तत्पर है ।

प्रेम के संबंध में इब्सन के जो विचार है वही विचार जार्ज बर्नार्ड शॉ के ' मैन एण्ड सुपरमैन ' में दिखाई देते है । इसी सैक्स समस्या को लक्ष्मीनारायण मिश्र जी ने ' सिंदूर की होली ' में प्रस्तुत किया है । ' मैन एण्ड सुपरमैन ' के ओक्टोवियस और टेनर उसीतरह ही ' सिंदूर की होली ' की मनोरमा और चन्द्रकला के संवाद एक - दुसरे से मेल खाते है । टेनर ओक्टोवियस से सिर्फ प्रेम ही करना चाहती है शादी नहीं । विवाह से प्रेम की हत्या होती है ऐसा वह मानती है इसलिए वह विवाह के स्थानपर सिर्फ प्रेम चाहती है । यहीं स्थिति मिश्र जी की मनोरमा और मनोजशंकर में है । वह मनोजशंकर से कहती है - ' मै तुम्हे अपना दुल्हा तो नहीं बना सकती लेकिन प्रेमी अवश्य बना लूँगी ।' इन संवादों में स्पष्टता से स्वच्छन्दतावादी कामप्रवृत्ति के दर्शन होते है । इब्सन के ' समाज के स्तंभ ' के बर्निक का लोना, बेली और ' राक्षस के मंदिर ' का अश्करी और ललिता से प्रेम करना समान ही है ।

यथार्थवादी वर्ग के रुसी नाटककार चेखव ने अपनी नाटय कृत्तियों में यौन विच्युतियों और आन्तरिक संघर्षो को चित्रित किया है । ' द सींगल ' के पात्रों की मनोवृत्तियाँ इन्हीं मानसिक अवस्थितियों से भरी पड़ी है । उपेंद्रनाथ अश्क का ' भँवर ' नाटक चेखव के इसी नाटक से प्रभावित दिखाई देता है । ' द सींगल ' नाटक में आर्कदीना, त्रिगोरिन, लेखक को प्यार करती है । नीना उसे न चाहकर त्रिपलेब को चाहती है । भँवर में भी यही स्थिति है ' प्रतिभा ' प्रो. नीलाभ से प्रेम करती है लेकिन प्रो. नीलाभ अपनी ही एक शिष्या से विवाह करके परावृत्त भी हो जाता है । वह प्रतिभा को नहीं चाहता है । तदुपरान्त प्रतिभा अपने सहपाठी सुरेश से शादी करती है लेकिन सुरेश शंकुतला के प्रेम में बंध चुका है । प्रतिभा के

पीछे प्रो.ज्ञान और हरदत्त है । टाल्स्टाय के ' द लिविंग कार्प्स आररिडेम्शन ' में भी यही शैली अपनायी है । चेखव और टाल्स्टाय के काम प्रवृत्त्यात्मक नाटकों से उपेंद्रनाथ अश्क का ' भँवर ' प्रभान्वित है । इन नाटकों की समानता इड़ के आधिपत्य में है ।

आधुनिक हिंदी नाटकों में लक्ष्मीनारायण मिश्र के नाटकों से ही फ्राईड का प्रभाव पाया जाता है । ' सिंदूर की होली ' नाटक में मनोजशंकर के संवादों में फ्राईड के ही सिध्दातों का प्रतिपादन है । वह डाक्टर से कहता है - ' आप लोग प्रत्येक बीमारी की शारीरिक दवा करते है, और शरीर को ही उसका कारण समझते है, जो की अधिकांश बीमारियाँ मानसिक विक्षोभ के कारण होती है ।' फ्राईड के अनुसार मनोग्रस्तता के बावजूद बहुत सी बीमारियाँ होती है । मिश्र जी का उक्त संवाद पाश्चात्य नाटकों के मनोविश्लेषणवाद के अति निकट है । मिश्र जी के ' संन्यासी ' राक्षस का मंदिर और ' सिंदूर की होली ' यह पूर्णतया मनोवैज्ञानिक नाटयकृतियाँ है । " मुक्ति का रहस्य ' तो उनकी सर्वश्रेष्ठ मनोवैज्ञानिक धारा की कृति है ।

हिंदी साहित्य में मनोविज्ञान की धारा पुराण कालों से आबाद गति से बहती आ रही है । आज इस परम्परा में और भी प्रवाह आकर मिल गये है जिसके कारण यह धारा बहुत ही विस्तृत हो गयी है । सभी साहित्यपर इसका प्रभाव दृष्टिगोचर हो रहा है । जो धारा धीरे-धीरे पर्वतों पहाडियों से बल खाती बह चली थी उसी धारा ने आज सागर का रुप लिया है

मिश्रजी के नाटयकृतियों के पश्चात् भुवनेश्वर प्रसाद के ' कारवाँ ' एकांकी नाटक में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति दिखाई देती है । उनके ' श्यामा एक वैवाहिक विडम्बना ' एकांकी नाटक में यौन वर्जना और बुध्दित्व, कामविकृतियाँ आदि बातें दिखाई देती है । डा. रामकुमार वर्मा के ' 18 जुलाई की शाम ' एकांकी नाटक में फ्राइडियन स्वच्छन्द काम की अभिव्यक्ति एवं फ्राईड और होमरलेज द्वारा स्वैरिणी प्रवृत्ति में सुधार का प्रस्फुटन हुआ है । मिश्र के ' अधिराज ' नाटक में भी यहीं स्वच्छन्द प्रवृत्ति है । उदयशंकर भट्ट के ' मत्स्यगंधा ' नाटक

में भी यही स्वच्छन्द प्रवृत्ति, प्रकृत काम, इड़ा तथा विभ्रम के द्वारा सहबोधावस्था और यौन तृप्ति का पूर्ण समाहार हुआ है । उनके दूसरे भावनाटय ' विश्वामित्र ' में अहंवादी युग के अनुसार उनमें भी अंहम की स्थापना में आन्तरिक द्वन्द्व के कारण दोहरा व्यक्तित्व मिलता है ।

डॉ. वृन्दावन लाल वर्मा का ' मंगल सूत्र ' नाटक विकृत स्ना युगत रतिशक्ति हीनता की मनोवैज्ञानिक अवधारणा पर आधारित है । नाटक का प्रधान पात्र कुन्दनलाल इसी विकृति से ग्रसित है । यौन-भावना की अति के कारण शिथलता और त्रुटियाँ दोनों भी उसमें आने लगती है । कुन्दनलाल की मानसिक अवस्थिति भय संवेग के कारण रतिशक्ति हीनता से अनुप्राणित है । मनोविश्लेषक गोपीनाथ इसको भली भाँति जानता है कि कुन्दनलाल का जिस अलका नाम की लडकी से विवाह होने वाला है वह उससे प्रारम्भ से ही भयभीत है । कुन्दनलाल में यह यौन शिथलता का स्नायविक आतंक आगे चलकर उसके जीवन में प्रबल हो उठता है । स्नायविक आतंक का प्रभाव होता है कि पुरुष अपनी रति शक्ति के विषय में निरंतर चिंतित रहता है,और शाश्वत गति से उसे उददीप्त करनेकी चेष्टा करता है । कुन्दनलाल पात्र में यही मानसिक प्रक्रम है ।

वर्मा जी की यह ' खिलोने की खोज ' नाटयकृति मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अनूठी है । इसकी पूरी कथावस्तु मनोवैज्ञानिक समस्या पर आधारित है । फ्राईड की काम प्रवृत्ति से इसका अविछिन्न संबंध है । मन की गुप्त कामेषणा मानव को रोगग्रस्त बनाती है । यह मनोवैज्ञानिक उपपति है कि प्रायः अन्तर्द्वन्द्व की हद हो जाती है तो मनुष्य को कोई न कोई शारीरिक रोग आक्रान्त कर देता है । " खिलोने की खोज ' के डॉ.सलिल , डॉ.भवन ऐसे ही रोगी है वे स्वंय रोग से पछ्डे हुऐ है । नाटक की रचनात्मक प्रक्रिया पर नवीन मनोविज्ञान का प्रत्यक्ष प्रभाव है । नाटक की कथावस्तु, पात्र और कथोपकथन मनोविश्लेषण के ही आधार पर संघटित है ।

मनोवैज्ञानिक परम्परा में आनेवाला ' चिरंजीत ' जी का ' महाश्वेता ' एकांकी नाटक भी है । इसकी कथावस्तु पूर्णतया मनोवैज्ञानिक है और संवादों में मनोविश्लेषणात्मकता

का स्पष्ट प्रभाव है । सुधाकर पात्र में यौन विकृत्ति एवं कामात्मक प्रतीकवाद के अन्तर्गत पिगमेंलियनवादी मनोवृत्ति का प्रयोग अति ह्दयस्पर्शी बन पड़ा है । और साथ ही उसकी पत्नी कमला के नारी मनोविज्ञान से उस कृति की शोभा चौगुनी बन गयी है ।

उदय शंकर भट्ट जी का ' मत्स्यगंधा ' नाटक गीति-प्रधान भाव नाटय है । इसमें प्रकृत काम की स्वच्छन्दता का भव्य निदर्शन हुआ है । इसकी कथावस्तु मानसिक प्रक्रमपर आधारित है । संपूर्ण नाटक में काम का दुर्दम इड़ मत्स्यगंधा में हिलोरे ले रहा है, वहाँ सामाजिक अहं और नैतिकता की एक नहीं चलती । कोमोद्वेग और समाजगत नैतिक बन्धन ने मत्स्यगंधा में मानसिकता का विकास हुआ है । मनोविकृतिवश मत्स्यगंधा में सहबोधावस्था मनोवृत्ति के दर्शन होते है ।

विष्णु प्रभाकर जी का ' डाक्टर ' नाटक हीनत्व कुण्ठा का विकसित रुप है । नायिका मधुलक्ष्मी का विवाह सतीशचंद्र शर्मा इंजीनिअर से हुआ है । लेकिन सतीशचंद्र मधुलक्ष्मी को छोड़कर दूसरा विवाह कर लेता है । परित्यत्का मधुलक्ष्मी में आत्महीनता ग्रंथि से क्षतिपूर्ति की प्रतिक्रिया है । सतीशचंद्र को नीचा दिखाने के लिए मधुलक्ष्मी (अनिला) क डाक्टरी पास करके अस्पंताल चलाना, अपनी सौत मरीज को अस्पताल में दाखिल न करते हुए भी दाखिल करने पर स्वीकृति देना, आपरेशन न करना चाहते हुए भी आपरेशन करना और असफल होने की अशंका होते हुऐ भी सफल बनना आदि मानसिक घटनायें नाटक की कथावस्तु की एकमात्र आधार बनी है । प्रतिशोध के आधार पर नाटक की कथावस्तु, पात्र और रचनात्मक प्रक्रिया को नाटककार ने पूर्ण मनोवैज्ञानिक बना दिया है ।

अश्क के नाटकों में भी मनोविज्ञान के दर्शन होते है । उनके जय-पराजय, भँवर, अंजोदीदी, कैद, उड़ान, छठ़ा बेटा आदि नाटक मनोविज्ञान के सुंदर नमुने है । रामकुमार वर्मा इस क्षेत्र के प्रख्यात नाटककार माने जाते है । उनके' विजय पर्व, कला और कृपाण, नाना फडनवीस, जौहर की ज्योति ' आदि श्रेष्ठ मनोवैज्ञानिक नाटक है । वे एक सफल एकाँकीकार भी है, औरंगजेब की आखिरी रात, चारुमित्रा, तथा उत्सर्ग आदि उनके मनोवैज्ञानिक एकांकी नाटक है ।

जगदीशचंद्र माथुर जी का ' कोणार्क ' नाटक कला के प्राचीन और नवीन उदाहरण है । ' कोणार्क ' में कलाकार का हाहाकार भरा हुआ है । 'सहनशील विशु तथा विद्रोही धर्मपद में जैसे कला के प्राचीन और नवीन युग मूर्तिमान हो उठे है । विशु और धर्मपद का पिता पुत्र का नाता और तत्संबंधी करुण कथा जैसे इतिहास के गर्जन में मानव की धडकन धुल-मिलकर नाटक को मार्मिकता प्रदान करती है । मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यहाँ यह कहा जा सकता है कि एक ही व्यक्तितत्व के दो रुप विशु और धर्मपद में आकर धुलमिल गये है । पिता विशु का उदात्तीकरण पुत्र धर्मपद में तादात्म्य स्थापित करके पूर्णतया सफल ऊर्ध्वगमन कर बैठा है । माथुर जी का ' शारदीया 'नाटक भी अत्युत्तम नाटक है । इसमें बायजाबाई और नरसिंहराव के प्रेम की अनूठी कहानी प्रस्तुत की है । बायजाबाई नरसिंह देव को चाहती है लेकिन महाराज उसका विवाह दूसरे के साथ कर देते है । नरसिंहदेव कैद में है वह उसको नहीं भूलता । अंतिम समय में बायजाबाई को स्वंय बुनी हुई साडी उपहार के स्वरुप दे देता है । चाणक्य की तरह नरसिंहदेव में भी काम की उदात्तीकरण की प्रवृत्ति दिखाई देती है । मनोविज्ञान की दृष्टि से अगर वह बायजाबाई के सामने अपना ह्दय न खोलता तो पागल बन गया होता ।

आधुनिक काल के नाटककारों में मनोवैज्ञानिक नाटककार मोहन राकेश जी है । उनकी नाटयकृतियाँ 'आषाढ़ का एक दिन ' लहरों के राजहंस ' और ' आधे - अधूरे 'पूर्ण मनोवैज्ञानिक श्रेणी में आनेवाले नाटक है । ' आषाढ़ का एक दिन ' कवि कालिदास के जीवन पर लिखा गया नाटक है । कवि कालिदास जब ग्राम में रहता है तब वह इस ग्राम के सौदर्य से मुग्ध हो जाता है । साथ में मल्लिका का प्रेम उसके कलाकार को जागृत करता है । मल्लिका हर तरह से उसे प्रोत्साहन देती है और उसकी माँ और मातुल कालिदास के रास्त में काटों बन जाते है । इसकारण उसके अहं पर चोट पडती है और वह तन, मन, और मल्लिका की प्रेरणा से बहुत ही सुंदर कृतियाँ लिखता है । बाद में वह राजकवी बन जाता है । प्रियंगुमंजरी राजकन्या से उसका विवाह भी हो जाता है । राज्य का कारोबार भी उसके हाथ में

आता है लेकिन वह अपना गाँव, आषाढ़ के वे दिन, मल्लिका को भूलता नहीं । बल्कि वे ही सब उसे लिखने की प्रेरणा देते है । कालिदास को लेकर मल्लिका में मानसिक द्वन्द्व प्रारंभ हो जाता है । परिस्थितिवश मजबूर होकर मल्लिका अपना विवाह मन के विरुध्द कर लेती है वह कालिदास को अभी तक नहीं भूली है उसके बारें में मल्लिका के मन में अभी भी प्रेम दिखाई देता है । कालिदास के मन में अभी भी ग्राम का आकर्षण है । जब कालिदास के राज्य में विप्लव होता है तब वह भागकर अपने ग्राम वापस आता है ।

इस नाटक में नाटककार ने मल्लिका और कालिदास के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण किया है । मनोवैज्ञानिक दृष्टी से देखा जायेगा तो यह दिखाई देता है कि पुरुष के अहंम पर जब चोट पडती है तब वह किसीका भी सोच - विचार नहीं करता । इसलिए ही जब कालिदास को मालुम हो जाता है कि मल्लिका का ब्याह हो गया है और उसकी एक बच्ची भी है यह देखकर वास्तव में वहाँ से भाग जाता है । वह परिस्थिति के साथ मुकाबला नहीं कर सकता साथ ही वह मल्लिका का भी विचार नहीं करता । मनोविज्ञान की दृष्टि से कलाकार अपने मन के विरुध्द कोई भी बात नहीं सहता वह गलत है या सही है इसका भी वह विचार नहीं करता । वह अपनी विद्रोही भावना को हमेशा भरकर रखता है । यही भावना कालिदास के मन में आदोपांत भरी हुई है । मल्लिका उसके लिए कितना त्याग करती है यह सब भूलकर वह उसकी एक ही भूल को लेकर बैठता है । अपनी गलतियों का उसे कुछ नहीं लगता सिर्फ मल्लिका की एक गलती दिखाई देती है । उसके पीछे की वह परिस्थिति नहीं देखता सिर्फ उसके कलंक को देखता है ।

' आधे - अधूरे ' नाटक मनोवैज्ञानिक दृष्ठि से स्त्री और पुरुष के वैवाहिक जीवन में उठनेवाली भाव-भावनांओं को प्रदर्शित करनेवाला नाटक है । कमानेवाली स्त्री स्वच्छन्द रहना चाहती है । किसी का भी वह अंकुश अपने उपर नहीं रखना चाहती । पत्नी की यह प्रवृत्ति देखने के बाद पति में होनेवाली भाव-भावनाओं की उथल-पुथल इसमें

दिखाई है । साथ ही परिवार में बड़ों की आदत छोटे बच्चे भी किसप्रकार उठाते है यह मनोवैज्ञानिक बात भी बताई है । पूरे परिवार में एक-दूसरे के प्रति प्रेम और ममता की भावना ही नजर नहीं आती तो एक-दूसरे के प्रति नफरत, द्वेष और घुटन ही दिखाई देती है । यह भी मनोवैज्ञानिक बात है कि सावित्री हर एक के साथ आपनी काम-वासना को तृप्त करना चाहती है लेकिन वह कभी तृप्ती का अनुभव नहीं करती बल्कि वह अधूरी ही रह जाती है । सावित्री पाश्चात्य सभ्यता की नकल करना चाहती है लेकिन नौकरी करनेवाली स्त्री के लिए कभी यह मुमकिन नहीं हो सकता । मनोविज्ञान के अनुसार यह पूर्णता स्पष्ट है कि अतृप्त काम-वासना रखनेवाले पूरे घर को ही बरबाद कर देते है । वे भी अधूरे ही रह जाते है । साथ ही साथ घर के लोग भी घुटन, संत्रास, कुण्ठोंओं के कारण ढ़ह जाते है ।

राकेश जी का ' लहरों के राजहंस ' यह नाटक ऐतिहासिक होते हुए भी मनोवैज्ञानिक है । मानव मन में हरदम यह द्वन्द्व चलता है कि त्याग या भोग इस में क्या श्रेष्ठ है । मानव मन जीवन के त्याग और भोग में फँसा हुआ होता है । वह कभी जीवन से मुक्त होना चाहता है तो कभी उसे सृष्टी का सौंदर्य और स्त्री का आकर्षण उसे जीवन में बाँधकर रखता है । नन्द के मन में भी यही अर्न्तद्वन्द्व चल रहा है । नन्द को एक ओर सुन्दरी का आकर्षण, राज्यसत्ता का उपभोग खिंच रहा हैं तो दूसरी ओर गौतम बुध्द के विचार खिंच रहे है । नन्द एक ओर जीवन से मुक्त होने के लिए छटपटा रहा है तो दूसरी ओर सुन्दरी के रुप पर आसक्त हो गया है । इस आंतरिक द्वन्द्व के कारण वह सिंह के साथ लडता है तो कभी हिरण के पीछे भागता है । नन्द का बर्ताव इसलिए हो रहा है कि वह खुद के विचारों के साथ लढ रहा है । नन्द को श्यामाँग का बर्ताव अपने ही अर्न्तद्वन्द्व का रुप दिखाई देता है । श्यामाँग वास्तव में नन्द का ही प्रतिरुप है । नन्द को सोहरत और औरत खिंचती है इसकारण यह त्याग और भोग इन दोनों के बीच झूलता हुआ नजर आता है ।

मनोविज्ञान के अनुसार स्त्री अपने सौंदर्य से पुरुष को अपने आकर्षण में बाँध लेना

चाहती है अपने ईद-गिर्द घुमाना चाहती है । जिस तरह भँवरा फूलों के पास मँडराता है उसीतरह ही सुन्दरी नन्द को अपने आस-पास मँडराने के लिए विवश करती है । दीपशिखा पर आसक्त होकर पतंग जिस तरह उसके पास चक्कर काटता है, उसीतरह नन्द भी सुन्दरी के पास लाड-प्यार से चक्कर काटता है । लेकिन जब दीप की लू लग जाती है तब उसे पता चलता है, कि यह मजाक नहीं तो जीवन को भस्म कर देनेवाली आग हैं । इस कारण नन्द एक दिन इस आग से तंग आकर घर से भाग जाता है ।

निष्कर्ष :-

संस्कृत साहित्य में मनोविज्ञान का अविरल रुप मिलता है । प्राकृत साहित्य में भी इसका प्रभाव ज्यादातर नही था लेकिन यह धारा आबाद गति से बह रही थी । लेकिन जब पाश्चात्य नाटकों का अध्ययन प्रारंभ हुआ तब इस मनोविज्ञान की परम्परा में एक नया मोड आ गया। फ्राईड, युंग, सोफोक्लीज आदि मनस्तत्वों ने कुछ सिध्दान्त निर्धारित किये जिसे आज साहित्य में मनोविज्ञान नाम से जाना पहचाना जाता है । नाटय साहित्य में और विशेषकर मनोविज्ञान संबंधी इन लोगों का बहुत ही आदर के साथ नाम लिया जाता है , जिनमें प्रमुख है शेक्सपीयर, यथार्थवादी नाटककार इब्सन, जॉर्ज बनार्ड शॉ, टाल्सटाय आदि पाश्चात्य नाटककार है । इसके साथ ही यूरोपीय नाटककारों ने भी इस परम्परा को आगे बढ़ाने में बहुमुल्य कार्य किया है । यूरोपीय मनोवैज्ञानिक नाटककार चेखव, युगेन, ओनील, पिरेन्डेलो, स्ट्रिन्डवर्ग, मेंटरलिंग और आस्कर वाइल्ड आदि प्रमुख है । आज के नाटककार जिसप्रकार फ्राईड के ऋणी है उसीप्रकार फ्राईड भी सोफोक्लीज, यूरोपिडीज, शेक्सपीयर, इब्सन और बनार्ड शॉ का ऋणी है । इनके नाटक ही आगे चलकर सभी लोगों के पथ प्रदर्शन बन गये । सभी बाद के नाटककारों पर इन्हीं लोगों का प्रभाव परिलक्षित होता है ।

इस परम्परा को सदृढ़ बनाने में बंगला नाटककार द्विजेंद्रलाल राय, जय शंकर प्रसाद

और लक्ष्मीनारायण मिश्र जी का सबसे बडा हाथ है । इन लोगों पर यथार्थवादी नाटककार इब्सन, जॉर्ज बनार्ड शॉं, शेक्सपीयर और टाल्सटाय आदि नाटककारों का प्रभाव पडा है । इसके साथ ही संस्कृत नाटककारों का भी इन पर प्रभाव है । भास, कालिदास, भवभूति आदि नाटककारों से भी उन्होंने प्रेरणा ग्रहण की है । प्रसाद के सभी नाटकों में मनोविज्ञान की झलक मिलती है । उनके सभी पात्र अर्न्तद्वर्न्द्व से भरे हुऐ मिलते है । प्रसाद जी पर शेक्सपीयर और द्विजेंद्रलाल राय का पूर्ण प्रभाव है । प्रसाद जी के ' स्कंदगुप्त ', चंन्द्रगुप्त, समुद्रगुप्त , ध्रुवस्वामिनी, विशाखा, कामना,राज्यश्री आदि नाटकों में मनोविज्ञान का निखरा रुप मिलता है । ल. मिश्रजी के नाटक मनोविज्ञान के क्षेत्र में अपनी एक अलग सत्ता रखते है । वास्तव में उन्हें हिंदी का प्रथम और सफल मनोवैज्ञानिक नाटककार कहे तो कोइ भी अत्युयोक्ति नही होगी उनकी चंन्द्रकला, मनोरमा, छाया, मनोजशंकर, आदि पात्र मनोवैज्ञानिक बन पडे है । ' सिंदुर की होली ' , मुक्तिका रहस्य, ' राक्षस का मंदिर ' और संन्यासी यह नाटक तो उनके सोहरत में चार चाँद लगा देते है । अन्य कुछ नाटककार भी हो गये जिन्होंने इस परम्परा को आगे बढ़ाने के लिए प्रयास किया ।

इसप्रकार हम ने यह देखा है कि, मनोवैज्ञानिक नाटकों की परम्परा किसतरह बहती हुई आज कहाँ तक पहुँच गयी है । इस परम्परा का उद्‌गम संस्कृत साहित्य से होकर वह प्राकृत आदि अनेक मार्गो से आगे बढ़ती रही । अँग्रेजी नाटककारों का इसमें बहुत बडा योगदान है । आज का मनोवैज्ञानिक नाट्‌य साहित्य उन्हीं की देन माननी चाहिए । हिंदी साहित्य में प्रमुख मनोवैज्ञानिक और श्रेष्ठ नाटककार जयशंकर प्रसाद, मिश्रजी, वृन्दावनलाल वर्मा, डा.शेष, विष्णु प्रभाकर, अश्क, रामकुमार वर्मा और मोहन राकेश आदि विद्वानोंने इस परम्परा को सदृढ और सशक्त किया । पुराणी नींव पर आज के नाटककारों ने सुंदर और सुडौल मनोवैज्ञानिक नाटकों की इमारत खड़ी की है ।